हेतु के रूप

हेतुके रूपके विषयमें दार्शनिकोंमें चार परम्पराएँ देखी जाती हैं—१—वैशेषिक, सांख्य, बौद्ध; २—नैयायिक; ३—अज्ञातनामक; ४—जैन।

प्रथम परम्पराके अनुसार हेतुके पक्षसत्त्व, सपक्षसत्त्व और विपक्षव्यावृत्तत्व ये तीन रूप हैं। इस परम्पराके अनुगामी वैशेषिक, सांख्य और बौद्ध तीन दर्शन हैं, जिनमें वैशेषिक और सांख्य ही प्राचीन जान पड़ते हैं। प्रत्यक्ष और अनुमान रूपसे प्रमाणद्वय विभागके विषयमें जैसे बौद्ध तार्किकोंके ऊपर कणाद दर्शनका प्रभाव स्पष्ट है वैसे ही हेतुके त्रैरूप्यके विषयमें भी वैशेषिक दर्शनका ही अनुसरण बौद्ध तार्किकोंने किया जान पड़ता है[1]। प्रशस्तपाद खुद भी लिङ्गके स्वरूपके वर्णनमें एक कारिकाका अवतरण देते हैं जिसमें त्रिरूप हेतुका काश्यप-कथित रूपसे निर्देश[2] है। माठर अपनी वृत्तिमें उन्हीं तीन रूपोंका निर्देश करते हैं (माठर० ५)। अभिधर्मकोश, प्रमाणसमुच्चय, न्यायप्रवेश (पृ० १), न्यायबिन्दु (२. ५ से), हेतुबिन्दु (पृ० ४) और तत्त्वसंग्रह (का० १३६२) आदि सभी बौद्धग्रन्थोंमें उन्हीं तीन रूपोंको हेतु लक्षण मानकर त्रिरूप हेतुका ही समर्थन किया है। तीन रूपोंके स्वरूपवर्णन एवं समर्थन तथा परपक्षनिराकरणमें जितना विस्तार एवं विशदीकरण बौद्ध ग्रन्थोंमें देखा जाता है उतना किसी केवल वैशेषिक या सांख्य ग्रन्थमें नहीं।

नैयायिक उपर्युक्त तीन रूपोंके अलावा अबाधितविषयत्व और असत्प्रति-पक्षितत्व ये दो रूप मानकर हेतुके पाञ्चरूप्यका समर्थन करते हैं। यह समर्थन सबसे पहले किसने शुरू किया यह निश्चय रूपसे अभी कहा नहीं जा सकता। पर सम्भवतः इसका प्रथम समर्थक उद्योतकर (न्यायवा० १. १. ५) होना चाहिए। हेतुबिन्दुके टीकाकार अर्चटने (पृ० २०५) तथा प्रशस्तपादानुगामी श्रीधरने नैयायिकोक्त पाञ्चरूप्यका त्रैरूप्यमें समावेश किया है। यद्यपि वाचस्पति

---

१ प्रो० शारबिट्स्कीके कथनानुसार इस त्रैरूप्यके विषयमें बौद्धोंका असर वैशेषिकोंके ऊपर है—Buddhist Logic vol. I P. 244.

२ 'यदनुमेयेन सम्बद्धं प्रसिद्धं च तदन्विते। तदभावे च नास्त्येव तल्लिङ्गमनु-मापकम्॥ विपरीतमतो यत् स्यादेकेन द्वितयेन वा। विरुद्धासिद्धसन्दिग्धमलिङ्गं काश्यपोऽब्रवीत्॥'—प्रशस्त० पृ० २००। कन्दली पृ० २०३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(तात्पर्य० १. १. ५; १. १. ३६), जयन्त (न्यायम० पृ० ११०) आदि पिछले सभी नैयायिकोंने उक्त पाञ्चरूप्यका समर्थन एवं वर्णन किया है तथापि विचार-स्वतन्त्र न्यायपरम्परामें वह पाञ्चरूप्य मृतकमुष्टिकी तरह स्थिर नहीं रहा। गदाधर आदि नैयायिकोंने व्याप्ति और पक्षधर्मतारूपसे हेतुके गमकतोपयोगी तीन रूपका ही अवयवादिमें संसूचन किया है। इस तरह पाञ्चरूप्यका प्राथमिक नैयायिकाग्रह शिथिल होकर त्रैरूप्य तक आ गया। उक्त पाञ्चरूप्यके अलावा छठा अज्ञातत्व रूप गिनाकर षड्रूप हेतु माननेवाली भी कोई परम्परा थी जिसका निर्देश और खण्डन अर्चट[1] ने 'नैयायिक-मीमांसकादयः' ऐसा सामान्य कथन करके किया है। न्यायशास्त्रमें ज्ञायमान लिङ्गकी करणताका जो प्राचीन मत (ज्ञायमानं लिङ्गं तु करणं न हि-मुक्ता० का० ६७) खण्डनीय रूपसे निर्दिष्ट है उसका मूल शायद उसी षड्रूप हेतुवादकी परम्परामें हो।

जैन परम्परा हेतुके एकरूपको ही मानती है और वह रूप है अविनाभाव-नियम। उसका कहना यह नहीं कि हेतुमें जो तीन या पाँच रूपादि माने जाते हैं वे असत् हैं। उसका कहना मात्र इतना ही है कि जब तीन या पाँच रूप न होने पर भी किन्हीं हेतुओंसे निर्विवाद सदनुमान होता है तब अविनाभाव-नियमके सिवाय सकलहेतुसाधारण दूसरा कोई लक्षण सरलतासे बनाया ही नहीं जा सकता। अतएव तीन या पाँच रूप अविनाभावनियमके यथासम्भव प्रपञ्चमात्र हैं। यद्यपि सिद्धसेनने न्यायावतारमें हेतुको साध्याविनाभावी कहा है फिर भी अविनाभावनियम ही हेतुका एकमात्र रूप है ऐसा समर्थन करनेवाले सम्भवतः सर्वप्रथम पात्रस्वामी हैं। तत्त्वसंग्रहमें शान्तरक्षितने जैनपरम्परासम्मत अविनाभावनियमरूप एक लक्षणका पात्रस्वामीके मन्तव्यरूपसे ही निर्देश करके खण्डन किया है[2]। जान पड़ता है पूर्ववर्ती अन्य जैनतार्किकोंने हेतुके स्वरूप

---

१ 'षड्लक्षणो हेतुरित्यपरे नैयायिकमीमांसकादयो मन्यन्ते। कानि पुनः षड्रूपाणि हेतोस्तैरिष्यन्ते इत्याह...त्रीणि चैतानि पक्षधर्मान्वयव्यतिरेकाख्याणि, तथा अबाधितविषयत्वं चतुर्थं रूपम्,...तथा विवक्षितैकसंख्यत्वं रूपान्तरम्—एका संख्या यस्य हेतुद्रव्यस्य तदेकसंख्यं...यद्येकसंख्यावच्छिन्नायां प्रतिहेतुरहितायां हेतुव्यक्तौ हेतुत्वं तदा गमकत्वं न तु प्रतिहेतुसहितायामपि द्वित्वसंख्यायुक्तायाम्...तथा ज्ञातत्वं च ज्ञानविषयत्वं च, न ह्यज्ञातो हेतुः स्वसत्तामात्रेण गमको युक्त इति।'—हेतुबि० टी० पृ० २०५।

२. 'अन्यथेत्यादिना पात्रस्वामिमतमाशङ्कते—नान्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम्। अन्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम्॥'—तत्त्वसं० का० १३६४-६६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपसे अविनाभावनियमका कथन सामान्यतः किया होगा। पर उसका सयुक्तिक समर्थन और बौद्धसम्मत त्रैरूप्यका खण्डन सर्वप्रथम पात्रस्वामीने ही किया होगा।

अन्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम्।
नान्यथाऽनुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम्॥ न्यायवि० पृ० १७७

यह खण्डनकारिका अकलङ्क, विद्यानन्द (प्रमाणप० पृ० ७२) आदिने उद्धृत की है वह पात्रस्वामिकर्तृक होनी चाहिए। पात्रस्वामीके द्वारा जो परसम्मत त्रैरूप्यका खण्डन जैनपरम्परामें शुरू हुआ उसीका पिछले अकलङ्क (प्रमाणसं० पृ० ६६ A) आदि दिगम्बर श्वेताम्बर तार्किकोंने अनुसरण किया है। त्रैरूप्यखण्डनके बाद जैनपरम्परामें पाञ्चरूप्यका भी खण्डन शुरू हुआ। अतएव विद्यानन्द (प्रमाणप० पृ० ७२), प्रभाचन्द्र (प्रमेयक० पृ० १०३), वादी देवसूरि (स्याद्वादर० पृ० ५२१) आदिके दिगम्बरीय-श्वेताम्बरीय पिछले तर्कग्रन्थोंमें त्रैरूप्य और पाञ्चरूप्यका साथ ही सविस्तर खण्डन देखा जाता है।

आचार्य हेमचन्द्र उसी परम्पराको लेकर त्रैरूप्य तथा पाञ्चरूप्य दोनोंका निरास करते हैं। यद्यपि विषयदृष्टिसे आ० हेमचन्द्रका खण्डन विद्यानन्द आदि पूर्ववर्ती आचार्योंके खण्डनके समान ही है तथापि इनका शाब्दिक साम्य विशेषतः अनन्तवीर्य की प्रमेयरत्नमालाके साथ है। अन्य सभी पूर्ववर्ती जैनतार्किकोंसे आ० हेमचन्द्र की एक विशेषता जो अनेक स्थलोंमें देखी जाती है वह यहाँ भी है। वह विशेषता—संक्षेपमें भी किसी न किसी नए विचारका जैनपरम्परामें संग्रहीकरणमात्र है। हम देखते हैं कि आ० हेमचन्द्रने बौद्धसम्मत त्रैरूप्यका पूर्वपक्ष रखते समय जो विस्तृत अवतरण न्यायबिन्दुकी धर्मोत्तरीय वृत्तिमेंसे अक्षरशः लिया है वह अन्य किसी पूर्ववर्ती जैन तर्कग्रन्थमें नहीं है। यद्यपि वह विचार बौद्धतार्किककृत है तथापि जैन तर्कशास्त्रके अभ्यासियोंके वास्ते चाहे पूर्वपक्ष रूपसे भी वह विचार खास ज्ञातव्य है।

ऊपर जिस 'अन्यथानुपपन्नत्व' कारिकाका उल्लेख किया है वह निःसन्देह तर्कसिद्ध होनेके कारण सर्वत्र जैनपरम्परामें प्रतिष्ठित हो गई है। यहाँ तक कि उसी कारिकाका अनुकरण करके विद्यानन्दने थोड़े हेर-फेरके साथ पाञ्चरूप्य-खण्डन विषयक भी कारिका बना डाली है—(प्रमाणप० पृ० ७२)। इस कारिकाकी प्रतिष्ठा तर्कबल पर और तर्कक्षेत्रमें ही रहनी चाहिए थी पर इसके प्रभावके कायल अतार्किक भक्तोंने इसकी प्रतिष्ठा मनगढ़न्त ढङ्गसे बढ़ाई। और यहाँ तक बह बढ़ी कि खुद तर्कग्रन्थलेखक आचार्य भी उस कल्पित ढङ्गके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिकार बने। किसी ने कहा कि उस कारिकाके कर्त्ता और दाता मूलमें सीमन्धरस्वामी नामक तीर्थङ्कर हैं। किसीने कहा कि सीमन्धरस्वामीसे पद्मावती नामक देवता इस कारिकाको लाई और पात्रकेसरी स्वामीको उसने वह कारिका दी। इस तरह किसी भी तार्किक मनुष्यके मुखमें से निकलनेकी ऐकान्तिक योग्यता रखनेवाली इस कारिकाको सीमन्धरस्वामीके मुखमें से अन्धभक्तिके कारण जन्म लेना पड़ा—सन्मतिटी० पृ० ५६६ (७)। अस्तु। जो कुछ हो आ० हेमचन्द्र भी उस कारिकाका उपयोग करते हैं। इतना तो अवश्य जान पड़ता है कि इस कारिकाके सम्भवतः उद्भावक पात्रस्वामी दिगम्बर परम्पराके ही हैं; क्योंकि भक्तिपूर्ण उन मनगढ़न्त कल्पनाओंकी सृष्टि केवल दिगम्बरीय परम्परा तक ही सीमित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org